दु:खाविनाभावित्वात्सुखस्येति तार्किकयोरेव मतं, तन्निराकरणार्थं सर्वदु:खाणमंतं परिविजाणंतीति उच्यते। सर्वदु:खानामन्तं पर्यवसानं परिविजानन्ति गच्छन्तीत्यर्थः। कुतः ? दु:खहेतुकर्मणां विनष्टत्वात्, स्वास्थ्यलक्षणस्य[1] सुखस्य जीवस्य स्वाभाविकत्वादिति ।

तिसु उवरिमासु पुढवीसु णेरइया णिरयादो णेरइया उव्वट्टिदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? ॥ २१७ ॥

दुवे गदीओ आगच्छंति तिरिक्खगदिं मणुसगदिं चेव ॥ २१८ ॥

तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा केइं छ उप्पाएंति ॥ २१९ ॥

सव्वमेदं सुगमं।

सम्बन्ध है, ऐसा दोनों ही तार्किकोंका मत है। उसी मतके निराकरणार्थ 'सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करतें हैं' ऐसा कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि वे जीव समस्त दु:खोंके अन्त अर्थात् अवसानको पहुंच जाते हैं, क्योंकि उनके दु:खके हेतुभूत कर्मोंका विनाश हो जाता है और स्वास्थ्यलक्षण सुख जो जीवका स्वाभाविक गुण है वह प्रकट हो जाता है।

ऊपरकी तीन पृथिवियोंके नारकी जीव नरकसे नारकी होते हुए निकलकर कितनी गतियोंमें आते हैं ? ॥ २१७ ॥

ऊपरकी तीन पृथिवियोंसे निकलनेवाले नारकी जीव दो गतियोंमें आतें हैं— तिर्यंचगति और मनुष्यगति ॥ २१८ ॥

ऊपरकी तीन पृथिवियोंसे निकलकर तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच कोई छह उत्पन्न करते हैं ॥ २१९ ॥

यह सब सुगम है।

---

१ स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पुंसां स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुरात्मा। तृषोऽनुषङ्गान्न च तापशान्तिरितीदमाख्यद् भगवान् सुपार्श्वः ॥ बृहत्स्वयंभूस्तोत्र ३१. आत्मोत्थमात्मना साध्यमव्याबाधमनुत्तरम्। अनन्त स्वास्थ्यमानन्दमतृष्णमपवर्गजम् ॥ क्षत्रचूडामणि ७, १३. आत्म ज्ञातृतया ज्ञानं सम्यक्त्वं चरितं हि सः। स्वस्थो दर्शनचारित्रमोहाभ्यामनुपप्लुतः ॥ तत्त्वार्थसार, उपसंहार, ७.

तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा केइं छ उप्पाएंति ॥ २३२ ॥

सव्वमेदं सुगमं।

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुसा केइं दस उप्पाएंति — केईमाभिणिबोहियणाणमुप्पाएंति, केइं[1] सुदणाणमुप्पाएंति, केईमोहिणाणमुप्पाएंति, केइं मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केइं केवलणाणमुप्पाएंति, केइं सम्मामिच्छत्तमुप्पाएंति केइं सम्मत्तमुप्पाएंति, केइं संजमासंजममुप्पाएंति, केइं संजममुप्पाएंति। णो बलदेवत्तं उप्पाएंति, णो वासुदेवत्तमुप्पाएंति, णो चक्कवट्टित्तमुप्पाएंति, णो तित्थयरत्तमुप्पाएंति। केइमंतयडा होदूण सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिविजाणंति[2] ॥ २३३ ॥

उक्त भवनवासी आदि देव-देवियां तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच होकर कोई छह उत्पन्न करते हैं ॥ २३२ ॥

ये सब सूत्र सुगम हैं।

उक्त भवनवासी आदि देव-देवियां मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच होकर दश उत्पन्न करते हैं — कोई आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई श्रुतज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई अवधिज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं कोई केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यग्मिथ्यात्व उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यक्त्व उत्पन्न करते हैं, कोई संयमासंयम उत्पन्न करते हैं, और कोई संयम उत्पन्न करते हैं। किन्तु वे न बलदेवत्व उत्पन्न करते, न वासुदेवत्व उत्पन्न करते, न चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते और न तीर्थंकरत्व उत्पन्न करते हैं। कोई अन्तकृत होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करते हैं ॥ २३३ ॥

---

१ मुप्पाएंति त्ति. केइं

२ णिवकंता भवणादो × × × सलागपुरिसा ण होंति कइयाइं ॥ ति. प. ३, १९५-११६ शलाकापुरुषा न स्युर्भौमज्योतिष्कभावनाः। अनन्तरभवे तेषां भाज्या भवति निर्वृतिः॥ ततः परं विकल्प्यन्ते यावद् ग्रैवेयकं सुराः। शलाकापुरुषत्वेन निर्वाणगमनेन च॥ तत्त्वार्थसार २, १७१-१७२.

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुस्सा केइमेक्कारस उप्पाएंति– केइमाभिणिबोहियणाणमुप्पाएंति, केइं सुदणाणमुप्पाएंति, केइं मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केइमोहिणाणमुप्पाएंति, केइं केवलणाणमुप्पाएंति, केइं सम्मामिच्छत्तमुप्पाएंति, केइं सम्मत्तमुप्पाएंति, केइं संजमासंजममुप्पाएंति, केइं संजममुप्पाएंति । णो बलदेवत्तं णो वासुदेवत्तमुप्पाएंति, णो चक्कवट्टिमुप्पाएंति[1] । केइं तित्थयरत्तमुप्पाएंति, केइमंतयडा होदूण सिज्झंति[2] बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिविजाणंति ॥ २२० ॥

सुगममेदं ।

तिरिक्खा मणुसा तिरिक्ख-मणुसेहि कालगदसमाणा कदि गदीओ गच्छंति ॥ २२१ ॥

ऊपरकी तीन पृथिवियोंसे निकलकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्य कोई ग्यारह उत्पन्न करते हैं – कोई आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई श्रुतज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई अवधिज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यग्मिथ्यात्व उत्पन्न करते हैं कोई सम्यक्त्व उत्पन्न करते हैं, कोई संयमासंयम उत्पन्न करते हैं, और कोई संयम उत्पन्न करते हैं । किन्तु वे जीव न बलदेवत्व उत्पन्न करते, न वासुदेवत्व उत्पन्न करते, और न चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते हैं । कोई तीर्थंकरत्व उत्पन्न करते हैं, कोई अन्तकृत् होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं, व सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करते करते हैं ॥ २२० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

तिर्यंच व मनुष्य, तिर्यंच व मनुष्य पर्यायोंसे मरण करके, कितनी गतियोंमें जाते हैं ? ॥ २२१ ॥

---

१ निर्गत्य नारका न स्युर्बल-केसव-चक्रिणः ॥ तत्त्वार्थसार २, १५२.

२ उपरि तिसृभ्य उद्वर्तितास्तिर्यक्षु जाताः केचित्षडुत्पादयन्ति । मनुष्येषूत्पन्नाः केचिन्मतिश्रुतावधि-

चत्तारि गदीओ गच्छंति णिरयगदिं तिरक्खगदिं मणुसगदिं देवगदिं चेदि ॥ २२२ ॥

णिरय-देवसु उववण्णल्लया णिरय-देवा केइं पंचमुप्पाएंति केइमाभिणिबोहियणाणमुप्पाएंति, केइं सुदणाणमुप्पाएंति, केइमोहिणाणमुप्पाएंति, केइं सम्मामिच्छत्तमुप्पाएंति, केइं सम्मत्तमुप्पाएंति ॥ २२३ ॥

सुगममेदं ।

तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा मणुसा केइं छ उप्पाएंति ॥ २२४ ॥

एदं पि सुगमं ।

मणुसेसु उववण्णल्लया तिरिक्ख-मणुस्सा जहा चउत्थपुढवीए भंगो[1] ॥ २२५ ॥

तिर्यंच व मनुष्य मरण करके चारों गतियोंमें जाते हैं—नरकगति, तिर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति ॥ २२२ ॥

तिर्यंच व मनुष्य मरण करके नरक व देवोंमें उत्पन्न होनेवाले नारकी व देव कोई पांच उत्पन्न करते हैं--कोई आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई श्रुतज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई अवधिज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यग्मिथ्यात्व उत्पन्न करते है, और कोई सम्यक्त्व करते हैं ॥ २२३ ॥

ये सूत्र सुगम है ।

तिर्यंचोंमें उपत्पन्न होनेवाले तिर्यंच व मनुष्य कोई छह उत्पन्न करते हैं ॥२२४॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच व मनुष्य चतुर्थ पृथिवीसे निकलकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके समान गुण उत्पन्न करते हैं ॥ २२५ ॥

मन ःपर्ययकेवलसम्यक्त्वसम्यङ्मिथ्यात्वसंयमासंयमानुत्पादयन्ति, न च बलदेववासुदेवचक्रधरत्वान्युत्पादयन्ति, केचित्तीर्थकरत्वमुत्पादयन्ति, अपरे कर्माष्टकान्तकराः सिध्यन्ति । त. रा. ३, ६.

१ संखेज्जाउवमाणा मणुवा णर-तिरिय-देव-णिरएसुं । सव्वेसुं जायंते सिद्धगदीओ वि पावंति ॥ ते पुढविभंगो ता. १ ।

एदं पि सुगमं ।

देवगदीए देवा देवेहि उव्वट्टिद-चुदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? ॥ २२६ ॥

दुवे गदीओ आगच्छंति तिरिक्खगदिं मणुसगदिं चेदि ॥ २२७ ॥

तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा केइं छ उप्पाएंति ॥ २२८ ॥

सव्वमेदं सुगमं ।

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुसा केइं सव्वं उप्पाएंति—केइमाभिणिबोहियणाणमुप्पाएंति, केइं सुदणाणमुप्पाएंति केइमोहिणाणमुप्पाएंति, केइं मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केइं केवलणाणमुप्पाएंति, केइं सम्मामिच्छत्तमुप्पाएंति, केइं सम्मत्तमुप्पाएंति, केइं संजमासंजम-

---

यह सूत्र भी सुगम है ।

देवगतिमें देव देवपर्यायों सहित उद्वर्तित और च्युत होकर कितनी गतियोंमें आते हैं ? ॥ २२६ ॥

देवगतिसे निकले हुए जीव दो गतियोंमें आते हैं—तिर्यंचगति और मनुष्यगति ॥ २२७ ॥

देवगतिसे निकलकर तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच कोई छह उत्पन्न करते हैं ॥ २२८ ॥

ये सब सूत्र सुगम हैं ।

देवगतिसे निकलकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्य कोई सर्व गुणोंको उत्पन्न करते हैं—कोई आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई श्रुतज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई अवधिज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यग्मिथ्यात्व उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यक्त्व

संखातीदाऊ जायंते केइ जाव ईसाणं । ण हु होंति सलायणरा जम्मम्मि अणंतरे केई ॥ ति प. २९४४-२९४५.
शलाकापुरुषा नैव सत्यनन्तरजन्मनि । तिर्यञ्चो मानुषाश्चैव भाज्याः सिद्धगतौ तु ते । तत्त्वार्थसार २, १६१.

मुप्पाएंति, केइं संजमं उप्पाएंति, केइं बलदेवत्तमुप्पाएंति, केइं वासुदेवत्तमुप्पाएंति, केइं चक्कवट्टित्तमुप्पाएंति, केइं तित्थयरत्तमुप्पाएंति, केइमंतयडा होदूण सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिविजाणंति[1] ॥ २२९ ॥

सुगममेदं ।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोदिसियदेवा देवीओ सोधम्मीसाणकप्पवासियदेवीओ च देवा देवेहि उव्वट्टिद-चुदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? ॥ २३० ॥

दुवे गदीओ आगच्छंति तिरिक्खगदिं मणुसगदिं चेव ॥ २३१ ॥

उत्पन्न करते हैं, कोई संयमासंयम उत्पन्न करते हैं, कोई संयम उत्पन्न करते हैं, कोई बलदेवत्व उत्पन्न करते हैं, कोई वासुदेवत्व उत्पन्न करते हैं, कोई चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते हैं, कोई तीर्थकरत्व उत्पन्न करते हैं, कोई अन्तकृत् होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं, सर्व दुखोंके अन्तका अनुभव करते हैं ॥ २२९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

भवनवासी, वानव्यन्तर व ज्योतिषी देव और देवियां सौधर्म और ईशान कल्पवासी देवियां, ये देव देवपर्यायोंसे उद्वर्तित और च्युत होकर कितनी गतियोंमें आते हैं ॥ २३० ॥

उक्त भवनवासी आदि देव और देवियां दो गतियोंमें आते है-- तिर्यंचगति और मनुष्यगति ॥ २३१ ॥

---

१ संवुडे णं भंते अणगारे सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ, से केणट्ठेणं सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ ? गोयमा, संवुडे अणगारे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधाणबद्धाओ पकरेइ, दीहकालट्ठिईयाओ हस्सकालट्ठिइयाओ पकरेइ, तिव्वाणुभावाओ मंदाणुभावाओ पकरेइ, बहुप्पएसग्गाओ अप्पपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं ण बंधइ, अस्सायावेयणिज्जं च णं कम्मं नो भुज्जो भुज्जो । उवचिणाइ, अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतससारकंतारं वीइवयइ । से एएणट्ठेणं गोयमा, एवं वुच्चइ-- संवुडे अणगारे सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाणमंतं करेइ । व्याख्याप्रज्ञप्ति १, १, १९.　　२ गदी ता. २ ।

तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा केइं छ उप्पाएंति ॥ २३२ ॥

सव्वमेदं सुगमं ।

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुसा केइं दस उप्पाएंति—केईमाभिणिबोहियणाणमुप्पाएंति, केइं[1] सुदणाणमुप्पाएंति, केईमोहिणाणमुप्पाएंति, केइं मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केइं केवलणाणमुप्पाएंति, केइं सम्मामिच्छत्तमुप्पाएंति केइं सम्मत्तमुप्पाएंति, केइं संजमासंजममुप्पाएंति, केइं संजममुप्पाएंति । णो बलदेवत्तं उप्पाएंति, णो वासुदेवत्तमुप्पाएंति, णो चक्कवट्टित्तमुप्पाएंति, णो तित्थयरत्तमुप्पाएंति । केइमंतयडा होदूण सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिविजाणंति[2] ॥ २३३ ॥

उक्त भवनवासी आदि देव-देवियां तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच होकर कोई छह उत्पन्न करते हैं ॥ २३२ ॥

ये सब सूत्र सुगम हैं ।

उक्त भवनवासी आदि देव-देवियां मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंच होकर दश उत्पन्न करते हैं—कोई आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई श्रुतज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई अवधिज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं कोई केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यग्मिथ्यात्व उत्पन्न करते हैं, कोई सम्यक्त्व उत्पन्न करते हैं, कोई संयमासंयम उत्पन्न करते हैं, और कोई संयम उत्पन्न करते हैं। किन्तु वे न बलदेवत्व उत्पन्न करते, न वासुदेवत्व उत्पन्न करते, न चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते और न तीर्थंकरत्व उत्पन्न करते हैं । कोई अन्तकृत होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करते हैं ॥ २३३ ॥

---

१ मुप्पाएंति त्ति. केइं

२ णिक्कंता भवणादो × × × सलागपुरिसा ण होंति कइयाइं ॥ ति. प. ३, १९५-११६. शलाकापुरुषा न स्युर्भौमज्योतिष्कभावनाः । अनन्तरभवे तेषां भाज्या भवति निर्वृतिः ॥ ततः परं विकल्प्यन्ते यावद् ग्रैवेयकं सुराः । शलाकापुरुषत्वेन निर्वाणगमनेन च ॥ तत्त्वार्थसार २, १७१-१७२.

दीपो यथा निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरीक्षम्[1]।
दिशन्न कांचिद्विदिशन्न कांचित्स्नेहक्षयात्केवलमेति शान्तिम् ॥ २ ॥

जीवस्तथा निर्वृतिमभ्युपेतो नैवावनिं गच्छति नान्तरिक्षम् ।
दिशं न कांचिद्विदिशं न कांचित्क्लेशक्षयात्केवलमेति शान्तिम्[2] ॥ ३ ॥

इति स्वरूपविनाशो मोक्ष इति बौद्धैरभाणि[3], तन्मतनिरासार्थं सिद्धयन्तीत्युच्यते। सेसं सुगमं।

सोहम्मीसाण जाव सदर-सहस्सारकप्पवासियदेवा जधा देवगदिभंगो[4] ॥ २३४ ॥

सुगममेदं।

" जिस प्रकार दीपक जब बुझता है तब वह न तो पृथिवीकी ओर जाता न आकाशकी ओर, न किसी दिशाको जाता है, न विदिशाको, किन्तु तैलके क्षय होनेसे केवल शान्त हो जाता है, उसी प्रकार निर्वृतिको प्राप्त जीव न पृथिवीकी ओर जाता न आकाशकी ओर, न किसी दिशाको जाता न विदिशाको, किन्तु क्लेशके क्षय हो जानेसे केवल शान्तिको प्राप्त होता है ॥ २-३ ॥

इस प्रकार स्वरूपके विनाशका नाम ही मोक्ष है, " ऐसा बौद्धोंका कहना है। इसी मतके निराकरणार्थ सूत्रमें ' सिद्ध होते हैं ' ऐसा कहा गया है। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

सौधर्म-ईशानसे लेकर शतार-सहस्रार तकके देवोंकी गति सामान्य देवगतिके समान है ॥ २३४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

---

१ नान्तरीक्षम् मु.

२ सौन्दरानन्द १६, २८-२९.

३ प्रदीपनिर्वाणकल्पमात्मनिर्वाणमिति च तस्य खरविषाणवत्कल्पना तैरेवाहत्य निरूपिता। स. सि. १, १ रूपवेदनासंज्ञासंस्कारविज्ञानपंचकस्कंधनिरोधादभावो मोक्षः...तन्न। त. रा. १. १. नवानामात्मगुणानां बुद्धिसुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नधर्माधर्मसंस्काराणां निर्मूलोच्छेदोऽपवर्ग इत्युक्तं भवति। ननु तस्यामवस्थायां कीदृगात्मावशिष्यते। स्वरूपैकप्रतिष्ठानः परित्यक्तोऽखिलैर्गुणैः न्यायमंजरी पृ. ५०८.

४ सोहम्मादी देवा भज्जा हु सलागपुरिसणिवहेसुं। णिस्सेयसगमणेसुं सव्वे वि अणंतरे जम्मे ॥ णवरि विसेसो सव्वट्ठसिद्धिठाणदो विच्चुदा ॥ भज्जा सलागपुरिसा णिव्वाणं जंति णियमेणं ॥ ति, प. ८, ६८२-६८३.

आणदादि जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवा देवेहि चुदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? ॥ २३५ ॥

एक्कं हि चेव मणुसगदिमागच्छंति ॥ २३६ ॥

सुगममेदं ।

मणुस्सेसु उववण्णल्लया मणुस्सा केइं सव्वे उप्पाएंति ॥ २३७ ॥

कुदो ? विरोहाभावादो । सेसं सुगमं ।

अणुदिस जाव अवराइदविमाणवासियदेवा देवेहि चुदसमाणा कदि गदीयो आगच्छंति ? ॥ २३८ ॥

एक्कं हि चेव मणुसगदिमागच्छंति ॥ २३९ ॥

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुस्सा तेसिमाभिणिबोहियणाणं सुदणाणं णियमा अत्थि, ओहिणाणं सिया अत्थि, सिया णत्थि । केइं

आनत आदिसे लगाकर नव ग्रैवेयकविमानवासी देव देवपर्यायोंसे च्युत होकर कितनी गतियोंमें आते हैं ? ॥ २३५ ॥

उपर्युक्त आनतादि नव ग्रैवेयकविमानवासी देव केवल एक मनुष्यगतिमें ही आते हैं ॥ २३६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आनतादि नव ग्रैवेयकविमानवासी उपर्युक्त देव च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्य कोई सर्व गुण उत्पन्न करते हैं ॥ २३७ ॥

क्योंकि, उनके सर्व गुण उत्पन्न करनेमें कोई विरोध नहीं है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

अनुदिशसे लेकर अपराजित विमानवासी देव देवपर्यायोंसे च्युत होकर कितनी गतियोंमें आते हैं ? ॥ २३८ ॥

अनुदिशादि उपर्युक्त विमानवासी देव च्युत होकर केवल एक मनुष्यगतिमें ही आते हैं ॥ २३९ ॥

अनुदिशादि विमानोंके देव च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्योंके आभिनिबोधिक ज्ञान और श्रुतज्ञान नियमसे होता है । अवधिज्ञान होता भी है और

मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केवलणाणमुप्पाएंति । सम्मामिच्छत्तं णत्थि, सम्मत्तं णियमा अत्थि । केइं संजमासंजममुप्पाएंति, संजमं णियमा उप्पाएंति । केइं बलदेवत्तमुप्पाएंति, णो वासुदेवत्तमुप्पाएंति । केइं चक्कवट्टित्तमुप्पाएंति, केइं तित्थयरत्तमुप्पाएंति, केईमंतयडा होदूण सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिजाणंति[1] ।। २४० ।।

मदि-सुदणाणं व ओहिणाणं णियमा होदि[2] त्ति ? ण एस दोसो, अणणुगामिणो ओहिणाणस्स अणुगमाभावादो । ण च तत्थ सव्वेसिमोहिणाणमणुगामी चेव अणणुगामिणो वि ओहिणाणस्स तत्थ संभवादो । देवा देवभावादो, देवेहिंतो देवणिकायादो । सेसं सुगमं ।

नहीं भी होता है । कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं, कोई केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं । उनके सम्यग्मिथ्यात्व नहीं होता, किन्तु सम्यक्त्व नियमसे होता है । कोई संयमासंयमको उत्पन्न करते हैं, संयमको नियमसे उत्पन्न करते हैं । कोई बलदेवत्व उत्पन्न करते हैं, किन्तु वासुदेवत्व उत्पन्न नहीं करते । कोई चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते हैं, कोई तीर्थंकरत्व उत्पन्न करते हैं, कोई अन्तकृत् होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होतें हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं, सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करते हैं ।। २४० ।।

शंका—अनुदिशादि विमानोंसे च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेंवाले जीवोंके मतिज्ञान और श्रुतज्ञानके समान अवधिज्ञान भी नियमसे क्यों नहीं होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, अननुगामी अवधिज्ञानके अनुगमका अभाव है । और अनुदिशादि विमानोंमें सभीका अवधिज्ञान अनुगामी ही होता है ऐसा नहीं है, क्योंकि वहां अननुगामी अवधिज्ञानका भी होना संभव है ।

सूत्रमें जो 'देवा' शब्द आया है उसका अभिप्राय है 'देवभावसे' और जो 'देवहिंतो' शब्द आया है उसका अभिप्राय है 'देवनिकायसे'। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

---

१ तीर्थेशरामचक्रित्वे निर्वाणगमनेन च । च्युताः सन्तो विकल्प्यन्तेऽनुदिशानुत्तरामराः ॥ तत्त्वार्थसार २, १७३.

२ होदि त्ति. मु.

सव्वट्ठसिद्धिविमाणवासियदेवा देवेहि चुदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ?॥ २४१ ॥

एक्कं हि चेव मणुसगदिमागच्छंति ॥ २४२ ॥

मणुसेसु उववण्णल्लया मणुसा तेसिमाभिणिबोहियणाणं सुदणाणं ओहिणाणं च णियमा अत्थि, केइं मणपज्जवणाणमुप्पाएंति, केवलणाणं णियमा उप्पाएंति। सम्मामिच्छत्तं णत्थि सम्मत्तं णियमा अत्थि। केइं संजमासंजममुप्पाएंति। संजमं णियमा उप्पाएंति। केइं बलदेवत्तमुप्पाएंति, णो वासुदेवत्तमुप्पाएंति। केइं चक्कवट्टित्तमुप्पाएंति, केइं तित्थयरत्तमुप्पाएंति। सव्वे ते णियमा अंतयडा होदूण सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं परिविजाणंति[1] ॥ २४३ ॥

सर्वार्थसिद्धि विमानवासी देव देवपर्यायोंसे च्युत होकर कितनी गतियोंमें आते हैं ? ॥ २४१ ॥

सर्वार्थसिद्धि विमानवासी देव च्युत होकर केवल एक मनुष्यगतिमें ही आते हैं ॥ २४२ ॥

सर्वार्थसिद्धि विमानसे च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्योंके आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान नियमसे होता है। कोई मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न करते हैं,। केवलज्ञान वे नियमसे उपत्न्न करते हैं। उनके सम्यग्मिथ्यात्व नहीं होता, किन्तु सम्यक्त्व नियमसे होता है। कोई संयमासंयम उत्पन्न करते हैं, किन्तु संयम नियमसे उत्पन्न करते हैं। कोई बलदेवत्व उत्पन्न करते हैं, किन्तु वासुदेवत्व उत्पन्न नहीं करते। कोई चक्रवर्तित्व उत्पन्न करते हैं, कोई तीर्थंकरत्व उत्पन्न करते हैं। वे सब नियमसे अन्तकृत होकर सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं और सर्व दुखोंके अन्त होनेका अनुभव करते हैं ॥ २४३ ॥

---

[1] भाज्यास्तीर्थेशचक्रित्वे च्युता. सर्वार्थसिद्धितः। विकल्पा रामभावेऽपि सिद्ध्यन्ति नियमात्पुनः ॥

किमट्ठं ण तेसिं वासुदेवत्तं? ण, तस्स मिच्छत्ताविणाभाविणिदाणपुरंगमत्तादो। ओहिणाणं णियमा अत्थि त्ति कधं ? ण, तेसिं अणणुगामि-हायमाण-पडिवादिओहिणाणाणमभावादो[1]। सम्मत्तसयलकज्जादो पत्तप्पसरूवा[2] सिज्झंति। अणवगयत्थाभावादो अण्णाणकणस्स[3] वि अभावादो वा, सिद्धाणं बुद्धिअभावपदुप्पायअदुण्णयणिवारणट्ठं वा, अप्पाणं चेव जाणइ सिद्धो ण बज्झट्ठमिदि दुण्णयणिवारणट्ठं वा बुज्झंति त्ति उत्तं। अमुत्तस्स मुत्तेहि अमुत्तेहि वा बंधो णत्थि त्ति मोक्खाभावमिच्छत्तदुण्णयणिवारणट्ठं मुच्चंति त्ति उत्तं। असरीरस्स इंदियाणमभावादो विसयसेवा णत्थि तदो तेसिं सुहं णत्थि

शंका—सर्वार्थसिद्धि विमानसे च्युत होकर मनुष्य होनेवाले जीवोंके वासुदेवत्व क्यों नहीं होता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वासुदेवत्वकी उत्पत्तिमें उससे पूर्व मिथ्यात्वके अविनाभावी निदानका होना अवश्यंभावी है।

शंका—उनके अवधिज्ञान नियमसे होता है, सो कैसे ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उनके अननुगामी, हीयमान व प्रतिपाती अवधिज्ञानोंका अभाव है।

सकल कार्योंका समाप्त कर लेने अर्थात् कृतकृत्यसे हो जानेसे सर्वार्थसिद्धि विमानसे आये हुए मनुष्य आत्मस्वरूपको प्राप्त करके सिद्ध होते हैं। अनवगत पदार्थोंके अभावसे अथवा अज्ञानके कणमात्रके भी अभावसे, अथवा सिद्धोंके बुद्धि-अभावको उत्पन्न करनेवाले दुर्नयके निवारणार्थ, अथवा सिद्ध केवल आत्माको जानता है बाह्यार्थको नहीं जानता, ऐसे दुर्नयके निवारणार्थ सूत्रमें 'बुज्झंति' अर्थात् 'बुद्ध होते हैं' यह पद कहा गया है। 'अमूर्तका मूर्त अथवा अमूर्तके साथ बन्ध नहीं होता' ऐसा मोक्षके अभावसम्बन्धी मिथ्यात्वरूपी दुर्नयके निवारणार्थ 'मुच्चंति' अर्थात् 'मुक्त होते हैं' यह पद कहा गया है। 'जिसके शरीर नहीं है उसके इन्द्रियोंका भी अभाव होनेसे विषयसेवा नहीं हो सकती, अतएव मुक्त जीवोंके सुख नहीं है'

दक्षिणेन्द्रास्तथा लोकपाला लौकान्तिकाः शची। शक्रश्च नियमाच्च्युत्वा सर्वे ते यान्ति निर्वृतिम्॥ तत्त्वार्थसार २, १७४–१७५.

१ हायमाणु सपडिवादि ता. १, हायमाणसपडिवादि ता. २। वर्धमानो हीयमानः अवस्थितः अनवस्थितः अनुगामी अननुगामी अप्रतिपाती प्रतिपातीत्येतेऽष्टौ भेदा देशावधेर्भवन्ति। त. रा. १, २२.

२ पत्तप्पसरूवादो वा ता. २।   ३ अण्णाणकरणस्स ता. २

त्ति भणंतदुण्णयणिवारणट्ठं परिणिव्वाणयंति त्ति उत्तं। संते सुहे दुक्खेण वि होदव्वं, अण्णहा सुहाणुववत्तीए इदि भणंतदुण्णयणिवारणट्ठं सव्वदुक्खाणमंतं परिविजाणंति त्ति उत्तं।

एवं चूलिया समत्ता।

जीवट्ठाणं समत्तं।

ऐसा कहनेवालोंके दुर्नयके निवारणार्थ 'परिणिव्वाणयंति' अर्थात् परिनिर्वाणको प्राप्त होते हैं, ऐसा कहा गया है। 'जहां सुख है, तहां दुख भी होना चाहिये, नहीं तों सुखकी उपपत्ति नहीं बन सकती' ऐसा कहनेवालोंके दुर्नयके निवारणार्थ 'सर्व दुःखोंके अन्त होनेका अनुभव करते हैं' ऐसा कहा गया है।

इस प्रकार चूलिका समाप्त हुई।

जीवस्थान समाप्त।